Academe Journal of Education & Psychology
Volume-7, Issue-2, Year-2017
PP: 49-51 *ISSN No: 2249-040X*

राष्ट्र और व्यक्ति की व्यथा गाथा 'कलि-कथा: वाया बाइपास'

पूनम सूद

एसोसिएट प्रोफेसर, श्री वेंकटेश्वर कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय

सार

अलका सरावगी आधुनिक युग के कथाकारों में एक सशक्त हस्ताक्षर हैं और इसी कारण उन्होंने हिंदी साहित्य में अपनी गरिमामयी स्थिति दर्ज करवाई है। उन्होंने परंपरागत ढांचे को तोड़ कर यह साबित कर दिया कि घर, परिवार, और यौनिकता से इतर भी सृजन के नए प्रतिमानों को स्थापित किया जा सकता है इसलिए उन्होंने अपने उपन्यास **कलिकथा: वाया बाईपास** में समसामयिक विषय को अपनी कथा का आधार बनाया जो समकालीन यथार्थ की ओर इशारा करता है, तथा समय के पीछे औपनिवेशिक काल, वर्तमान का बाजारवाद का काल और भविष्य की उपभोक्तावादी संस्कृति के काल को एक विस्तृत फलक पर समझने की उलझन पैदा करता है।

इक्कीसवीं सदी की दहलीज पर खड़े होकर देखने का प्रयास किया जाए तो बीसवीं सदी का अंतिम दशक एक पूरी सदी की यात्रा का अंतिम पड़ाव दिखता है जहाँ आकर आजाद भारत में तीन बड़ी घटनाएं स्पष्ट उभरती हैं। भारत में पहली बार आर्थिक उदारीकरण की नीति को अपनाया जाता है। इस दशक में आर्थिक उदारीकरण के माध्यम से भूमण्डलीकरण की प्रक्रिया सामने आती है। दूसरा महत्वपूर्ण घटक सामने आता है मंडल कमीशन के माध्यम से पिछड़ी जातियों का राष्ट्र की मुख्यधारा में शामिल होना। तीसरी बड़ी घटना घटती है अयोध्या के राम मंदिर विवाद के बाद देश में विभाजन के पश्चात फिर 'दूसरी' बार देश का धार्मिक खाँचों में बांटा जाना। इन तीन घटनाओं ने पिछले 50 वर्ष के बने भारत की तस्वीर को नये सिरे से समझने क लिए बाध्य कर दिया।

कलिकथा :

वाया बाइपास में बाइपास का अर्थ है समकालीन विडंबनाओं की ओर संकेत करना एवं उससे उत्पन्न उथल– पुथल की तरफ ध्यान आकर्षित करना। अतीत, वर्तमान और भविष्य के ताने बाने से बुना यह उपन्यास हिंदी साहित्य में एक अलग तरह का नैरेटिव सेट करता है। नामवर सिंह ने लिखा है कि–

"कलिकथा: वाया बाइपस ने हिन्दी उपन्यास का स्थापत्य बदल दिया। पिछले पचास में यह सबसे महत्वपूर्ण उपन्यास लिखा गया है" 1

जगत की सबसे बड़ी सच्चाई है मनुष्य! मनुष्य अपने भोगे हुए को पूर्णता से कभी भी व्यक्त नहीं कर सका है, इस समकालीन जटिल समाज में मनुष्य ने अपने आप को कहीं दबा सा दिया है,आधुनिकता की चप्पल पहन अपने जीवन की यथार्थता से भागता हुआ, बाजारवाद और उपभोक्तावादी संस्कृति की चादर ओढ़े मैटेरिएलिस्टिक जीवन के शिखर पर पहुंचने को आतुर है। इसी जटिल भौतिकतावादी जीवन की सच्चाई से रूबरू कराती हैं लेखिका **अलका सरावगी। कलिकथा वाया बाइपास** में **'बाईपास'** उन तमाम चीजों के लिए एक आर्षवाक्य है जिनको छोड़कर हम नए जीवन की ओर अग्रसर होने की एक उम्मीद है।

उपन्यास के कथानायक हैं किशोर बाबू और उनके मारवाड़ी परिवार की चार पीढ़ियां, जो मरुस्थल की भूमि राजस्थान से पूर्वी भूमि कलकत्ता की ओर पलायन करते हैं, पलायन से जुड़ी उनकी अथक उम्मीदें, पीड़ा और अन्तर्द्वंद ही कथा की जड़ें हैं। अब सवाल यह उठता है कि किशोर बाबू ही नायक क्यों हैं? तो इसका जवाब शंभू नाथ मिश्र देते हैं कि –

"दुनिया का हर हारा हुआ आदमी क्योंकि उपन्यासकार की सहानुभूति रखता है, इसलिए वह ही उसका नायक होता है"२

'कलिकथा' की **कथा** में भेदभाव, विषमता, कुंठा, और मानुषिक द्वंद के साथ साथ मारवाड़ी समाज की संस्कृति एवं कलकत्ता की संस्कृति के सकारात्मक एवं नकारात्म दोनों पहलुओं को बड़ी बारीकी से उकेरा गया है। जहां एक ओर मनुष्य की संवेदना और

© National Press Associates www.npajournals.org

मनोविज्ञान जैसे स्थिर पहलू हैं वहीं दूसरी ओर अस्थिर राजनीतिक परिवेश, सामाजिक विडम्बना, भारतीय अर्थव्यवस्था, भूमंडलीकरण तथा पाश्चात्य संस्कृति का अंधानुकरण भी देखा जा सकता है। नायक किशोर बाबू एक असाधारण व्यक्तित्व के हैं उन्होंने अपने जीवन का अधिकतम समय लगभग बिता दिया है उनकी तुलना 80 वर्ष पार के मुख्यमंत्री ज्योति बासु से की जा सकती है, लेकिन हार्ट अटैक आने पर उनकी **बाइपास** की सर्जरी के बाद उनकी मानसिक अवस्था खराब होने लगती है और इसी खराब दशा में वे रोज शाम होते ही पैदल निकल पड़ते हैं। पैदल सड़क पर घूमते हुए अतीत की स्मृतियों में गोते लगाते, उतराते रहते हैं जो उन्हें उनके जीवन के शुरुआती दिनों में ले जाती हैं जहां गांधीवादी दोस्त अमलोक और सुभाष भक्त शांतनु और और स्वयं किशोर बाबू की कहानी के साथ साथ कलकत्ता में ब्रिटिश शासन को दर्शाया गया है। जिसमें बंग–भंग आंदोलन, बंगाल अकाल, धार्मिक दंगे, देश विभाजन और स्वतंत्रता का स्वाभाविकता के साथ चित्रण है।

सूत्र यह है कि लेखिका के शब्दों में ही "किशोर बाबू की एक जिन्दगी में तीन जिन्दगियां जी गई हैं पहली जिंदगी मामाओं के आश्रय में रहते हुए अपने स्कूल के मित्र सुभाष भक्त शांतनु और गाँधी प्रेमी अमोलक के साथ या बाइस वर्ष तक की आयु की और दूसरी स्वतंत्रयोत्तर युग की और विवाह के पचास वर्ष तक की । तीसरी जिन्दगी बाइपास आप्रेशन के बाद उस वर्तमान से शुरू होती है, जो अभी हर वक्त हमारे आस-पास उपस्थित है। लेखिका की चेतना को यही आम आदमी की कथा उद्वेलित करती है कि भले ही मामूली आदमी का इतिहास है पर उसे अलिखित नहीं रहना चाहिए। 16 शीर्षकों और 216 पृष्ठों में समाहित एक राष्ट्र के बनते बिगड़ते परिवेश में एक लघु राष्ट्र की कथा उभरती है। स्मृत्यवलोकन पद्धति में लेखिका कथा लेखक व नायक किशोर बाबू की वार्तालाप व सलाह मशविरे से सामने आती इस कथा में एक 'युग' में निर्मित राष्ट्र के प्रत्येक पहलू सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, धार्मिक, साहित्यिक इत्यादि सभी से परिचित करवाती चलती है।

एक सदी की इस चेतना को अंतिम दशक में इस रूप में मूर्त होते देख साहित्यकार इसे बखूबी पकड़ता ही नहीं अपितु आत्मसात करके उस 'चेतना' को अनुभूति के स्तर पर अभिव्यक्त भी करता है। उपन्यास में अलका अपनी लैंगिक हदबन्दी को तोड़ते हुए एक 'भारतीय' के रूप मे पूरी सदी की चेतना को पकड़ने का प्रयास करती हैं, कलिकथा वाया बाईपास कई अर्थों में अपनी सदी की चिंता को व्यक्त करता है। एक ओर कलिकथा उपन्यास समय के विभाजन की भारतीय परिपाटी यानि समय की शाश्वत अवधारणा को सामने रखते हुए कलयुग की व्यंजना के माध्यम से इस सदी में व्याप्त विसंगतियों, विडंबनाओं को व्यंजित करने का प्रयत्न करता है तो दूसरी ओर उसके साथ कभी ब्रिटिश भारत के सहयोगी के रूप में, कभी उसका प्रतिकार करत हुए नर्मित हो रही बंगाली अस्मिता और इस प्रक्रिया में देश के अन्य हिस्से से आए हुए तबकों मसलन मारवाड़ियों के साथ उनके व्यवहार की व्यथा को प्रस्तुत करता है, इसक साथ यह आधुनिक भारत में खासकर स्वातंत्र्योत्तर भारत की बुनियादी समस्याओं को हाशिए पर छोड़कर बाईपास के माध्यम से बन रहे भारतीय राष्ट्र की व्यथा गाथा को प्रस्तुत करती है। किस प्रकार एक समाज पर कटु टिप्पणियाँ की जा सकती हैं उसका उदाहरण लेखिका देती है जब शांतनु किशोर को शांता भाभी का पुनर्विवाह करने का सुझाव देते हुए कहता है **" तुम्हारे मारवाड़ियों में भी पहला विधवा-विवाह हुए तेरह साल हो गए हैं। तुम क्या चाहते हो तुम्हारी भाभी का जीवन कैसा हो ? तिल-तिल कर जलते हुए वह सती हो ?3** शांतनु मारवाड़ियों को दकियानूसी समझता है और उनके पिछड़ेपन की आलोचना करता है। किशोर को यह बार चुभती है और वह मारवाड़ी होने के कारण स्वयं को अपराधी महसूस करता है ।

एक ओर इस उपन्यास में पूरे राष्ट्र के बनने की गाथा गाई गई है में वहीं दूसरी ओर एक परिवार की कहानी के माध्यम से मानवीय संवेदनाओं में हो रहे परिवर्तन को भी संजीदगी से पकड़ने का प्रयास किया गया है। इस प्रकार यह रचना पूरी सदी की चेतना को व्यापक संदर्भ में लेकिन उतनी ही गहराई से पकड़ने का प्रयास करती है।

राष्ट्र की सौ साल की व्यथा को एक परिवार के माध्यम से दिखाता है यह उपन्यास। उसके टूटने बनने की प्रक्रिया के माध्यम से राष्ट्र के टूटने बनने की प्रक्रिया की व्यथा व्यक्त हई है। देश के निर्माण की यही विडम्बना है कि अन्तर्विरोध पग-पग पर है। नवजागरण के आयातित ढांचे पर जो निर्माण होता है वह कैसे अपने बनाने वालों को हाशिए पर धकेलता है। यही युगीन चेतना अनुप्राणित होती है इस उपन्यास में एक जाति की व्यथा कथा के माध्यम से कैसे केंद्र के तौर पर बन रहे व्यापारी समूह जो कि मारवाड़ी समाज है अपनी जड़ों से कटा हुआ, दूर देश को अपना प्रिय देश बनाते हुए उसके आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक जीवन में पग-पग योगदान देता हुआ वही वर्ग व्यापारिक पूंजीवाद की शुरुआत के बाद कमर्शियलाएजेशन की प्रक्रिया में हाशिए पर चला जाता है। भूमंडलीकरण और ग्लोबल विलिज की भावना को भी यह उपन्यास खोखला करता है किस प्रकार बहुराष्ट्रीय कंपनियां हमारी स्वतंत्रता का सौदा करती हैं अलका लिखती हैं कि-

© National Press Associates www.npajournals.org

"टी.वी. के सब चैनलों पर आजादीवाले कार्यक्रमों के बिकाऊपन को पहले से भांप कर उसकी तैयारी करनेवालों की चांदी कट रही है। राष्ट्रीय ध्वज, चक्र तथा 'वंदेमातरम्' ने अखबारों और दूरदर्शन के विज्ञापनों में बिककर 'स्वतंत्रता' को करोड़ों रुपये का कारोबार बना दिया है। जूतों, मोजों, टी-शर्टों से लेकर गाड़ी बनानेवाली कंपनी तक ने आजादी की पचासवीं वर्षगांठ के झंडे के तीन उड़ते रंगों के बीच 'पचास' लिखे हुए नमूनों को हर जगह छाप दिया है। यहां तक कि सारी मल्टीनेशनल कंपनियां भारत की आजादी की वर्षगांठ को इस तरह मानने पर तुली हुई हैं मानो यह उनकी आजादी का ही जश्न हो। स्कूलों, अखबारों, पत्रिकाओं, स्वयंसेवी संस्थाओं सब जगह इस अवसर पर विशेषांक निकालने की तैयारी है और पुराने इतिहास को इस तरह मथा जा रहा है जैसे उसमें से अमृत या अनमोल रत्न निकल आएंगे।"4

"स्मृति की विशेषता है कि घटनाओं को कभी क्रमानसार संजोकर नहीं रखती बल्कि अपने चित्र के अनुसार घटनाओं को संजोती है। इसीलिए यहाँ घटनाएँ कम महत्वपूर्ण होती चली जाती हैं उनसे जुड़ा मन महत्वूर्ण होता चला जाता है इसलिए वह कभी 1940, में कभी 1947 में और कभी 2001 में चला जाता है। लेखिका अचानक बंगाल के अकाल को याद करते हुए कितना मार्मिक विवरण अमोलक द्वारा करती है और जब किशोर बाबू मारवाड़ी समाज के लिए दिए जा रहे तानों से परेशान हैं तो लेखिका यह भी दिखाती है कि सभी जाति और समुदायों से ऊपर हैं इंसानियत वह लिखती हैं कि –

"बंगाल में अकाल पड़ने के कारण वहाँ के गांवों के गरीब लोग गाँव छोड़कर कलकत्ते की सड़कों पर भीख माँग रहे हैं। एक दिन अमोलक एक ऐसी सुंदर गठीले बदन वाली लड़की को भीख माँगते देखता है जिसके बदन पर केवल न के बराबर कपड़े थे। वह सोचता है कि न जाने कितने भूखे भेड़ियों की बुरी नजर उसके यौवन पर पड़ी होगी। वह अपनी माँ से उसे साड़ी देने के लिए कहता है जिससे उसका बदन ढका रह सके, लेकिन दूसरे दिन अमोलक को तालाब में उस लड़की की लाश पड़ी मिलती है तभी वह कहता है- 'अब पता चल रहा है कि न जाने कितनी लड़कियों ने इसलिए आत्महत्या की है क्योंकि उनके पास शरीर ढकने तक के कपड़े नहीं थे। कितनी लड़कियों ने अपने-आपको इसलिए बेचा कि उनके पेट की भूख उनकी अंतडियों को खाने लगी थी आदमी के अंदर जो इंसानियत नाम की चीज है न किशोर उसे पेट की आग लील जाती है।"5

कथा की शुरुआत सन् 1857 से होती है और 'यह 'कथा 1.1.2000 तक चलती है अनेक महत्वपर्ण कालखंडों और घटनाओं की चश्मदीद गवाह बनते हुए जिसमें 1946 के नोआखली दंगे, 1947 का विभाजन है, और 1991-92 की आर्थिक उदारीकरण की नीति और फिर वैश्वीकरण और ध्रुवीकरण, लेखिका की चेतना यह कतई स्वीकार नहीं कि विदेशी फंड से अपने देश के स्रों (Resourees) को 'Byepass' करके कभी पूर्ण तरक्की या 'विकास' हो सकता है।

कलिकथा: वाया बाइपास" में 'बाइपास' शब्द कहानी का दिल है। जैसे हृदय रोगी की बंद नसों को छोड़कर नई नसों से रक्त प्रवाह का एक नया रास्ता बनाया जाता है, ताकि ऑक्सीजन फिर से शरीर में पहुंचे और जिंदगी चलती रहे, वैसे ही इस उपन्यास में भी एक गहरी बात छुपी है। जब आधुनिकता और बाजारवाद की अराजकता, समस्याओं और विडंबनाओं से देश का नैतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक विकास रुक जाता है, तो हमें नए रास्तों की तलाश करनी पड़ती है। ये रास्ते देश, समाज और व्यक्ति को एक स्वस्थ दिशा में ले जा सकते हैं। लेकिन इसके लिए हमें अपने देश के संसाधनों को दरकिनार करके विदेशी फंड या संसाधनों पर निर्भर नहीं होना चाहिए। चार पीढियों और तीन मित्रों के जीवन काल को समाहित करती यह कथा रूपी धारा व्यथा-गाथा और एक युग में निर्मित राष्ट्र की जिसे बाईपास करके निकलने की होड़ में सफलता के चरम छूने की महात्वाकांक्षा है। इस उपन्यास का अंत इसी गहरे विचार के साथ होता है, और यही इसकी रचना को इतना जीवंत बनाता है। अलका सरावगी की लेखनी में एक खास बात है—वो बहुत कुछ अनकहा छोड़ देती हैं, जो पाठक के मन में लंबे समय तक गूंजता रहता है। यही वजह है कि ये उपन्यास आपको छूकर जाएगा और आपकी यादों में बसा रहेगा। इसे पढ़ते वक्त आपको लगेगा कि कहानी सिर्फ किताब में नहीं, बल्कि आपके आसपास की जिंदगी में भी सांस ले रही है।

संदर्भ

1. इतिहास और आलोचना, नामवर सिंह, संत साहित्य प्रकाशन पृष्ठ 134
2. उपन्यास और हिन्दी आलोचना, शंभू नाथ मिश्र, के के प्रकाशन, पृष्ठ 106
3. कलिकथा वाया बाइपस, अलका सरावगी, राजकमल प्रकाशन, पृष्ठ 90
4. वही पृष्ठ 136
5. कलिकथा : वाया बाइपास, अलका सरावगी, राजकमल प्रकाशन पृष्ठ 153

© National Press Associates www.npajournals.org